RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-10
October-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

किसान आन्दोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

डॉ0 मो0 मकसूद आलम

इतिहास विभाग, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

इतिहास की विषय वस्तु का स्वरूप सदैव परिवर्तनशील रहा है। प्रत्येक युग की सामाजिक आवश्यकताओं और परिस्थितियों ने उसे प्रभावित किया हैं। इतिहास का अध्ययन केवल अतीत की घटनाओं और राजनीति तक सीमित नहीं हैं अपितु नैतिक नियमों, सामाजिक संस्थाओं और आर्थिक पहलुओं, साहित्य, कला, वर्ग, जाति एवं साहित्य तथा विज्ञान व तकनीकी भी उसके अध्ययन की विषय वस्तु हैं। प्रारंभ में विद्वानों ने केवल अपने पूर्वजों और महापुरूषों की स्मृत्तियों की सुरक्षा हेतु इतिहास लेखन की ओर ध्यान दिया था परंतु वर्तमान में उसकी विषय वस्तु का स्वरूप अत्यंत विस्तृत हो गया है जिसके कारण मानव के जीवन से संबंधित समस्त क्रियाकलापों को इतिहास में स्थान दिया गया है। इसलिये हेनरी मिरेन ने लिखा है ''इतिहास समाज में निवास करने वाले मनुष्यों के कार्यों और उपलब्धियों की कहानी है।'' प्रो0 ए0 एल0 राउज ने भी मिरेन के मत का समर्थन करते हुए लिखा है कि ''इतिहास की विषय वस्तु समाज के सभी पक्षों का वर्णन है जिसमें भौगोलिक परिस्थिति, वातावरण, आर्थिक व्यवस्था, उद्योग, प्रशासन और धर्म एवं संस्कृति का वर्णन है।

प्राचील काल से भारत के आर्थिक जीवन का प्रमुख आधार कृषि ही रहा हैं। समयानुसार किसानों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में भी परिवर्तन होते रहे हैं। प्राचीन काल से आधुनिक काल तक के शासकों ने किसानों के प्रति अलग–अलग प्रकार की नीतियों का अवलंबन दिया था, जिससे राजनीतिक परिवर्तनों का प्रभाव किसानों पर पड़ना स्वाभाविक हो गया था। सिंधु सभ्यता से राजपूत युग तक किसानों की स्थिति का वर्णन ऐतिहासिक ग्रंथों में उपलब्ध होता है।

प्राचील काल में कृषकों की दशा पर अनेक देशी विदेशी इतिहासकारों ने प्रकाश डाला है। उत्खनन द्वारा प्राप्त किये गये भग्नावशेषों से साफ होता है कि सिंधु सभ्यता के किसानों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ थी। यद्यपि समृद्धि प्राप्त करने हेतु उन्होंने विभिन्न साधनों का प्रयोग किया था किन्तु कृषि ही सर्वप्रमुख साधन प्रतीत होता है।

सिंधु सभ्यता के निवासियों का मुख्य व्यवसाय कृषि ही था। गेहूँ, जौ, कपास, मटर, तिल तथा संभवतः चावल और अनेक फल उगाये जाते थे। कृषि के अतिरिक्त सिंधु सभ्यता के निवासी पशुओं को भी पालते थें। पुरातात्विक स्त्रोतों से साफ होता है कि वे गाय, बैल, भैंस, बकरी, कुत्ता आदि पालते थे। ऊँट के अवशेष भी प्राप्त होते है।

सिंधु सभ्यता के विभिन्न स्थानों से प्राप्त वस्तुओं की सभ्यता को देखकर प्रतीत होता है कि आर्थिक क्षेत्र में सुसंगठित शासन तंत्र का नियंत्रण रहा होगा। पीगट का विचार है कि केवल शासकीय नियंत्रण से इतनी समरूपता नहीं आ सकती। शासकीय नियंत्रण के अतिरिक्त वाणिज्यिक संहिता एवं वस्तुओं के मानकीकरण की कोई व्यवस्था भी उस समय अवश्य विद्यमान रही होगी।

वैदिक काल में भी लोग कृषि कार्य किया करते थे। इस युग में भी कृषक सुखी सम्पन्न थे। इस काल के किसानों की स्थिति भी संतोषजनक थी। हल तथा बैलों का प्रयोग किसानों द्वारा किया जाता था। इतिहासकारों ने लिखा है कि वैदिक कालीन किसानों की आर्थिक स्थिति अत्यंत सुदृढ़ थी। डॉ0 बाशम ने लिखा है ''आर्यों का आर्थिक जीवन पशुपालन एवं कृषि पर सम्मिलित रूप से निर्भर था जिसमें पशुओं का महत्त्वपूर्ण स्थान था। कृषक पशु वृद्धि के लिये ईश्वर से प्रार्थना करता, योद्धा पशुओं के अपहरण की आशा करता तथा यज्ञ आदि में पुरोहितों को पशु ही भेंट किये जाते थे। वास्तव में पशु एक प्रकार के सिक्के थें तथा उनके द्वारा ही वस्तुओं का मूल्यांकन किया जाता था।

रैप्सन ने किसानों की आर्थिक स्थिति के बारे में लिखा है कि ''ऋग वैदिक कालीन अर्थ व्यवस्था का मुख्य आधार कृषि था। संभवतः यह आर्यों की प्राचीन वृत्ति थी क्योंकि कर्षण के लिये संस्कृत एवं ईरानी दोनों में समान धातु कृष है। अतः स्पष्ट है कि दोनों शाखाओं के पृथक होने से पूर्व ही आर्य यह वृत्ति अपना चुके थे।

उत्तर वैदिक काल में भी लोगों का प्रमुख व्यवसाय कृषि था। ऋग वैदिक काल की तुलना में इस युग में कृषि की अत्यंत उन्नति हुई थी। खेती के तरीकों, बीज, फसल आदि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए थे। गंगा और सिंधु नदियों के किनारे उपजाऊ मैदानों में पैदावार अच्छी होती थी और किसान थोड़े ही समय में समृद्धशाली हो गये। धातुओं के प्रयोग से भी कृषि का विकास हुआ।

संगम युग में किसानों द्वारा कृषि कार्य करने का वर्णन मिलता है। संगम युग में अन्न, मांस, मछली, गोलमिर्च, कटहल, हल्दी आदि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध थें। जमीन काफी उपजाऊ थी और कावेरी से सिंचाई की व्यवस्था होती थी

RRIJM 2015, All Rights Reserved

साहित्य में गन्ने, चीनी, शहद आदि का भी उल्लेख है। कृषक चरवाहा, व्यापारी और विभिन्न धंधों के लोग अपने–अपने वर्गों में संगठित थे। समुद्र तट पर व्यापार होते थे जहाँ से विदेशी व्यापार चलता था।

भारतीय किसानों पर सिकंदर के आक्रमण के प्रभावों की चर्चा करते हुये लिखा गया है ''भारत अपरिवर्तित रहा युद्ध के घाव शीघ्र ही भर गये। जब धीर बैलों और उन्हीं के समान धीर कृषकों ने अपना परिश्रम प्रारंभ किया तो ध्वस्त खेत एक बार फिर लहलहा गये... भारतवर्ष का यवनीकरण नहीं हुआ। अपना शानदार एकान्तता का जीवन वह व्यतीत करता रहा और यूनानी झंझावात के प्रवाह को वह शीघ्र भूल गया।

मौर्यकालीन किसानों की स्थिति भी संतोषजनक थी। यद्यपि समस्त भूमि पर राज्य का अधिकार था। वे लगान के रूप में निरन्तर सरकार को कुल उपज का एक चौथाई मात्रा दिया करते थे। सिंचाई कर अदार करके किसान राज्य की नहरों का प्रयोग किया करते थे। किसानों के हित के लिये शासक सदैव चिन्तित रहते थे और उनकी प्रत्येक संभव सहायता भी करते थे। मौर्य शासकों ने किसानों की सुविधा के लिये सिंचाई की सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था की थी, ताकि किसान सुखी–सम्पन्न रहे।

मौर्यकालीन किसानों की आर्थिक व्यवस्था कौटिल्य के अर्थशास्त्र, मेगास्थनीज की इंडिका और विशाखादत्त के मुद्राराक्षस में प्रचुर प्रकाश डाला गया है। सिंचाई की इतनी अधिक अच्छी व्यवस्था थी कि भारत में कभी अकाल नहीं पड़ता था। यह बात मेगास्थनीज के वर्णन में प्राप्त होता हैं। मेगास्थनीज के वर्णन से ही प्राप्त होता है कि मौर्य काल में वर्ष में ही दो फसले उगायी जाती थी। इस प्रकार की प्रमुख फसले गेहूँ, चावल, मूँग, कपास इत्यादि थे। कृषि से राज्य 'भाग' नामक कर लेता था जो प्रायः 1/4 से 1/8 तक होता था। कृषि के अतिरिक्त पशुपालन भी मौर्यकाल में एक मुख्य पेशा था।

भारतीय समाज का जो ढाँचा वैदिक युग में बना वह कतिपय परिवर्तनों के साथ आजतक विद्यमान है।

गुप्तकाल के सामाजिक जीवन का अपना कोई अलग स्वरूप नहीं है। इतना ही कहा जा सकता है कि वैदिक युग में समाज का प्रमुख रूप से जो ग्रामीण स्वरूप था, वह मौर्यकाल में नगरों की ओर उन्मुख हुआ था। गुप्तकाल में ग्रामीण और नागरिक दोनों का ही एक समन्वित रूप देखने को मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. अजीत कुमार, बिहार का इतिहास, पृ. 208।
2. प्रो. अन्नत लाल ठाकुर, कंप्रीहेन्सीव हिस्ट्री ऑफ बिहार, पृ. 666।
3. के. के. दत्त, बिहार में स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, पृ. 182।
4. एस. झा. पॉलिटिकल इलिट्स इन बिहार, पृ. 50।
5. कौशल किशोर शर्मा, एग्रेरियन मुवमेंट एण्ड कांग्रेस पॉलिटिकल इन बिहार, पृ. 81।
6. सुमित सरकार, प्रोसिडिंग्स ऑफ दि बिहार एण्ड उड़ीसा लेजीसलेचर कौंसिल, 1932, पृ. 40–41।
7. अरविंद एन. दास, डिफरेंश विट वीन दि कांग्रेस एण्ड दि किसान सभा इन बिहार, 1973।

RRIJM 2015, All Rights Reserved